कप्पय ।

तृण जो दन्त तर धरहिं, तिनहि मारत न सबल कोई ।
हम नितप्रति तृण चरहिं, बैन उच्चरहिं दीन होई ॥
हिन्दूहि मधुर न देहिं, कटुक तुरकन न पिलावहिं ।
पय विशुद्ध अति स्रवहिं, बच्छ महिथम्बन जावहिं ॥
सुन शाह अकबर, अरज़ यह, करत गौ जोरे करन ।
सो कौन चूक मोहि मारियत, मुये चाम सेवहुं चरन ॥१॥

कवित्त ।

गोबिन्द के कीये जीव जात हैं रसातल को,
गुरु उपदेश सो तो छूटे जम फन्द ते ।
गोबिन्द के कीये जीव वश परे कर्मन के,
गुरु के निवाज सूं ते फिरत स्वच्छन्द ते ॥
गोबिन्द के कीये जीव डूबत भवसागर में,
सुन्दर कहत गुरु काढ़े दुख द्वन्द ते ।
और हूं कहां लोक जू मुख से बनाय कहूं,
गुरुकी तो महिमा अधिक महिमा गोबिन्द ते ॥१॥

* ओ३म् *

सार संग्रह।

संग्रहकर्त्ता—

सूरज देवी,

भगवद्भक्ति आश्रम

रामपुरा.

द्वितीयवार २५०० } संवत् १९७७ वि० { मूल्य प्रेम

श्लोक ।

हकारः शिव रुपेण, सकार श्शक्ति रुच्यते ।
हंस हंसेति यो ब्रूयात्, जीवो जपति सर्वदा ॥ १ ॥

दोहे ।

उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरहिं खल रीति ।
जानु पाणि युग जोर कर, विनती करहुं सुप्रीति ॥ १ ॥
जड़ चेतन जग जीव जे, सकल राममय जान ।
बन्दौं सब के पद कमल, सदा जोरि युग पान ॥ २ ॥
देव दनुज नर नाग खग, प्रेत पितर गन्धर्व ।
बन्दौं किन्नर रजनीचर, कृपा करहु, अब सर्ब ॥ ३ ॥
मैं अपराधी जन्म का, नख शिख भरा विकार ।
तू दाता दुःखभञ्जना, मेरी करो सँभार ॥ ४ ॥

गुरोरष्टकं ।

शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्रं धनं मेरु तुल्यम् । गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥ १ ॥

कलत्रं धनं पुत्र पौत्रादि सर्वं गृहं बांधवाः सर्वमेतद्धि जातम् । गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किम्० ॥ २ ॥

षडांगादि वेदो मुखे शास्त्र विद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ३ ॥

क्षमा मन्डले भूप भूपाल वृन्दैः सदा सेवितं यस्य पादार विंदम् । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ४ ॥

यशो मे गतं दिक्षु दानप्रतापात् जगद्वस्तु सर्वं करे यत् प्रसादात् । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ५ ॥

न भोगे न योगे न वावाजि राजौ न कान्ता मुखे नैव वित्तेषु चित्तम् । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ६ ॥

अरण्ये न वा स्वस्य गेहे न कार्ये न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ७ ॥

अनर्घ्याणि रत्नानि भुक्तानि सम्यक्समालिंगिता कामिनी यामिनीषु । गुरो रंघ्रि पद्मे० ॥ ८ ॥

गुरोरष्टकं यः पठेत्पुण्य देही यतिर्भूपति ब्रह्मचारी च गेही । लभेद्वांछि तार्थं ब्रह्म संज्ञं गुरो रुक्त वाक्ये मनो यस्य लग्नंम् ॥ ९ ॥

गोविन्दाष्टक ७७

सत्यं ज्ञान मनन्तं नित्य, मनाकाशं परमाकाशं ।
गोष्ठ प्राङ्गण रिङ्गण लोल, मनायासं परमायासम् ॥
माया कल्पित नानाकार, मनाकारं भुवनाकारम् ।
क्षमामा नाथ मनाथं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ १॥

मृत्सा मत्सी हेति यशोदा, ताडन शैशव संत्रासं ।
व्यादित् वक्त्रा लोकित लोका, लोक चतुर्दश लोकालिम् ॥
लोक त्रयपुर मूलस्तम्भं, लोका लोक मना लोकं ।
लोकेशं परमेशं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दं ॥ २ ॥

त्रैविष्टपरिपु वीरघ्नं, क्षति भारघ्नं भव रोगघ्नं ।
कैवल्यं नवनीता हार, मनाहारं भुवनाहारं ॥
वैमल्य स्फुट चेतो वृत्ति, विशेषा भास मना भासं ।
शैवं केवल शास्त्रं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ३ ॥

गोपालं प्रभु लीला विग्रह, गोपाल कुल गोपालं ।
गोपी खेलन गोवर्द्धन धृति, लीला लालित गोपालम् ॥
गोभिर्नि गदित गोविन्द, स्फुट नामानं बहु नामानं ।
गोधी गोचरं दूरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ४ ॥

गोपी मन्डल गोष्ठी भेदं, भेदावस्थं भेदाभं ।
शश्वद् गोखुर निर्धूतो, धृत धूली धूसर सौभाग्यं ॥
श्रद्धा भक्ति गृहीत्वा नन्दं, चिन्त्यं चिन्तित रूद्भावं ।
चिन्तामणि मणि मानं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥५॥
स्नान व्याकुल योषिद् वस्त्र, मुपादायाग् मुपारूढं ।
व्यादित संतीरथ दिग् वस्त्रा, वस्त्र मुषा कर्षन्तता ॥
निर्धूत द्वय शोक विमोहं, बुद्धं बुद्धे रन्तस्थं ।
सत्ताप्रात्र शरीरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ६ ॥
कान्तं कारण कारण मादि, मनादिं काल घना भासं ।
कालिन्दि गत कालिय शिरसि, नृत्यन्तं मुहुर्नृत्यतं ॥
कालं काल कलातीतं, कलिता शेषं कलि दोषघ्नं ।
कालत्रय गति हेतु प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ७ ॥
वृन्दावन भुवि वृन्दारकगण, वृन्दा राधित वन्द्येहं ।
कुन्दा भामल मन्दस्मेर, सुधानन्द सुहृदानन्दम् ॥
वन्द्या शेष महा मुनि मानस, वन्द्यानन्द पद द्वन्द्वं ।
वन्द्या शेष गुणाब्धिं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ८ ॥
गोविन्दाष्टक मेतद्धीते, गोविन्दार्पित संचेता ।
गोविन्दांघ्रि सरोज ध्यान, सुधा जल धौत समस्ताघः ॥

गोविन्दा च्युत माधव विष्णो, गोकुल नायक कृष्णेति ।
नित्यं गायन यास्यति भक्तो, गोविन्द परमानन्दम् ॥ ६ ॥

छन्द ७८

नमामि भक्त वत्सलं, कृपालु शील कोमलं ।
भजामि ते पदांबुजं, अकामनां स्वधामदम् ॥
निकाम श्यामसुन्दरं, भवाम्बुनाथ मन्दिरं ।
प्रफुल्ल कंज लोचनं, मदादि दोष मोचनं ॥ १ ॥
प्रलम्ब बाहु विक्रमं, प्रभो प्रमेय वैभवं ।
निषंग चाप सायकं .धरं त्रिलोक नायकम् ॥
दितेश वंश मन्डनं, महेश चाप खन्डनं ।
मुनीन्द्र संत रंजनं, सुरारि वृन्द भंजनम् ॥ २ ॥
मनोज वैरि वन्दितं, अजादि देव सेवितं ।
विशुद्ध बोध विग्रहं, समस्त दूषणा पहम् ॥
नमामि इन्दिरापतिं, सुखाकरं सतां गतिं ।
भजे सशक्ति सानुजं, शची पति प्रियानुजम् ॥ ३ ॥
त्वदंघ्रि मूल ये नरा, भजन्ति हीन मत्सराः ।
पतन्ति नो भवार्णवे, वितर्क वीचि संकुले ॥

विविक्त वासिनः सदा, भजन्ति मुक्तये मुदा ।
निरस्य इन्द्रियादिकं, प्रयान्ति ते गतिं स्वकम् ॥ ४ ॥
त्वमेक मद्भुतं प्रभु, निरीह मीश्वरं विभुं ।
जगद्गुरुं च शाश्वतं, तुरीय मेव केवलं ॥
भजामि भाव वल्लभं, कुयोगिनां सुदुर्लभं ।
स्वभक्त कल्प पादपं, समस्त सेव्य मन्वहम् ॥ ५ ॥
अनूप रूप भूपतिं नतोऽहं मुर्विजा पतिं ।
प्रसीद मे नमामि ते, पदाब्ज भक्ति देहि मे ॥
पठन्ति येस्तवं इदं, नरादरेण ते पदं ।
व्रजन्ति नात्र संशय स्त्वदीय भाव संयुतम् ॥ ६ ॥

ॐ

"कलौतु केवला भक्तिः"

शब्द संग्रह

Shabd Sangrah

भगवद्भक्ति आश्रम, रामपुरा

(रेवाड़ी)

Registered (रजिस्टरी कीगई)

२००० प्रति] सं० १९८० [मूल्य प्रेम

गयादत शर्मा के प्रबन्ध से

गयादत प्रेस, बड़ा दरीबा देहली में छपा।

श्री राम नारायण वासुदेव,
गोविन्द वैकुण्ठ मुकुन्द कृष्ण ।
श्री केशवानन्त नृसिंह विष्णो,
मां त्राहि संसार भुजङ्ग दष्टम् ॥

हे श्री राम !, नारायण, वासुदेव, गोविन्द, वैकुण्ठ, मुकुन्द कृष्ण, श्री केशव, अनन्त, नृसिंह, विष्णु, संसार रूपी सांप करके काटे हुए मुझ को बचाओ ॥

गौविन्द केशव जनार्दन वासुदेव,
विश्वेश विश्व मधुसूदन विश्वरूप ।
श्रीपद्मनाभ पुरुषोत्तम देहि दास्यम्
नारायण ऽच्युत नृसिंह नमो नमस्ते ॥

हे गोविन्द, हे केशव, हे जनार्दन, हे वासुदेव, हे विश्व के स्वामी, हे विश्व, हे मधुसूदन, हे विश्व रूप, हे पद्मनाभ, हे पुरुषोत्तम ! मुझे दास भाव हो और हे अविनाशी हे नृसिंह तुझको बारंबार नमस्कार है।

अहिल्या पाषाणं प्रकृति पशुरासीत् कपिश्चमु
गुहो भूश्चान्डाल स्त्रिनयमपि नीतं निजपदम्
अहं चित्ते नाश्मा पशुरपि तवार्चाद्यकरणात्
क्रियाभिश्चाण्डाल रघुवर नमामोद्धरसिंकिम्

हे रघुवर ! अहिल्या पाषाण की थी और कपिश्चमु प्रकृतिसे पशु था और गुह जोकि निषादों का राजा था, वह चाण्डाल था उनको आपने अपना पद प्राप्त कराया। प्रभु ! मैं चित्त से तो पत्थर हूं और तुम्हारी पूजादि न करने से पशु भी हूं और क्रिया रहित होने से चाण्डाल हूं। हे रघुवर क्या मेरा उद्धार नहीं करोगे ?

वपुः प्रादुर्भावादनुमितमिदं जन्मनि पुरा,
पुरारे न प्रायः क्वचिदपि भवन्तं प्रणतवान्
नमन्मुक्तः सं प्रत्यहमतनुरग्रेऽप्यनति भाङ्
महेश क्षन्तव्यं तदिदमपराधद्वयमपि ॥

हे त्रिपुरारि! शरीर के प्रादुर्भाव (उतपत्ति) से ऐसा अनुमान होता है कि पूर्व जन्म में बहुत करके मैंने तुम्हें प्रणाम नहीं किया और अब प्रणाम करने से मुक्त हो जाऊंगा, इससे शरीर नहीं रहेगा, इसलिए अब फिर भी तुम्हें प्रणाम नहीं करूंगा। इसलिए हे महेश्वर! आप मेरे दोनों अपराधों को क्षमा करना ॥

नमोनमः कारणवामनाय,
नारायणा यामित विक्रमाय ।
श्री शार्ङ्ग चक्रासि गदाधराय,
नमोऽस्तु तस्मै पुरुषोत्तमाय ॥

कारण रूपी वामन सूदम के अर्थ नमस्कार है ; नारायण अतुल प्राक्रम वाले श्री शारङ्ग धनुष, चक्र, गदा धारण करने वाले तिस पुरुषोत्तम देव के अर्थ नमस्कार है ।

गुह्याय वेद निलयाय महोदराय,
सिंहाय दैत्य निधनाय चतुर्भुजाय ।
ब्रह्मेन्द्र रुद्र मुनि चारण संस्तुताय,
देवोत्तमाय वरदाय नमोऽच्युताय ॥

गुह्य स्वरूप वेद के स्थान महान उदर वाले सिंह स्वरूप दैत्यों को नष्ट करने वाले चतुर्भुज स्वरूप वाले ब्रह्मा, इन्द्र, शिव, मुनि; चारण इन्हों करके संस्तुत, देवताओं में उत्तम वरदायी, अच्युत अर्थात् जिसका अपने स्थान से पड़ना नहीं है ऐसे देव के अर्थ नमस्कार है ।

श्रीकृष्ण रुक्मिणीकान्त गोपीजन्मनोहर
संसार सागरे मग्नं मा मुद्धर जगद्गुरो ॥

❀ श्रीकृष्णाय नमः ❀

सार-संग्रह

संग्रह-कर्तृ

श्रीमती सूरजदेवी ।

प्रकाशक

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा, रेवाड़ी

मुद्रक

भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" श्रीभगवद्भक्ति
आश्रम रामपुरा रेवाड़ी ।

तृतीया वृत्ति १००० } सन् १९८४ { मूल्य ≋)

महात्माओं के वाक्य

हे मेरे ईश्वर ! मेरे जीवन के लबालब भरे पात्र से तू कौनसा दिव्य रस पान करना चाहता है।

त्याग मेरे लिये मुक्ति नहीं है मुझे तो आनन्द के सहस्रों बंधनों में मुक्ति का रस आता है।

आदमी जितना आप बिगाड़ करता है उतना दूसरे नहीं कर सकते। जो कुछ हम आप सीखते हैं उसका असर दूसरों की सीख से बढ़ कर है।

उपदेश और अच्छी सलाह जहां से मिले आदर के साथ स्वीकार करो। देखो मोती सा अनमोल पदार्थ सीप जैसी तुच्छ वस्तु से निकलता है। जो अच्छी सलाह नहीं सुनता वह धिक्कार सुनेगा।

अर्थ सिद्धि की दो कुंजियां हैं बुद्धि और आशा संयुक्त उद्योग। बिना इनके आदमी संसार में बढ़ नहीं सकता।

किसी बात के निर्णय में जल्दी न करो पर जब समझ लिया तो दृढ़ संकल्प रहो करने के पूर्व उस काम की हानि लाभ भलि भांति मन में तोल लो फिर उसको करो परिणाम

चाहे जो हो।

किसी काम में हाथ डालने के पहले अपने पुरुषार्थ को तोल लो बहुत ऊंचे बढ़ जाने से गिर जाने का डर और बहुत नीचे पड़े रहने से कुचल जाने का भय होता है।

मालिक पर भरोसा करो पर ऊंट के पांव बान्ध कर रक्खो।

जिसने किसी काम को पूरा करने का प्रण ठान लिया वह उस को अवश्य कर लेगा।

कर्ता सब पशु पक्षियों को आहार देता है परन्तु उन को मांद में नहीं डाल आता।

धन की मिठास उसको मिलेगी जिसने उसकी कमाई में महनत की कड़वाई को चक्खा है।

किसी कठिन काम के करने में हिम्मत हार देना कायरता का लक्षण है। यदि उसे दूसरे कर सकते हैं तो तुम क्यों नहीं कमर कस कर तयार हो जाते? कुल मालिक पर भरोसा अवश्य रक्खो जो सब उद्योग की जान है उस पर दृढ़ विश्वास रख कर आदमी असम्भव काम कर सकता है। असम्भव का शब्द केवल मूर्खों के कोष में मिलता है।

स्वतन्त्र और अनाधीन वही कहा जा सकता है जो अपने काम के लिये दूसरे का आश्रित नहीं है।

एक से एक मिलकर ग्यारह होते हैं परन्तु अलग रहने से एक का एक ही बना रहता है। पर याद रक्खो 'एका' नाम अच्छे और नीति संयुक्त कामों के लिये मिलने का है। नीति विरुद्ध कामों के लिये मिलने का नाम "गुट्ट है।

तैमूर लंग का कथन है कि यदि तुम प्रजा को आराम देना चाहते हो तो न्याय के खड्ग को आराम न लेने दो। न्याय में कोमलता मिली रहने से वह सोना और सुगन्ध होजाता है।

उमर भक्त ने किसी गुलाम से जो बकरी चराता था पूछा कि एक बकरी मेरे हाथ बेचेगा। उसने जवाब दिया कि बकरियों का मालिक दूसरा है मुझे तो इनके चराने का काम सुपुर्द है। इस पर उमर बोले कि इन का मालिक यहां तो नहीं देखता है उससे कह देना कि एक बकरी को भेड़िया उठा ले गया तब चरवाहे ने उत्तर दिया कि जो बकरी का मालिक नहीं दखता तो घट घट व्यापी मालिक तो देखता है।

यह सुन कर उमर रो पड़ा।

भलों का संग करो। कुसंग से बचो। बड़ों की आज्ञा पालन करना मनुष्य का धर्म है। बड़ों से लड़ना अपना अपघात करना है। बड़ों की सीख संसार को कीच में न फंसने के लिये लाठी का काम देती है समझदार को चाहिये की सदा बड़े का संग करे।

जो कोई अपनी उन्नति या कीर्ति चाहता है तो उसको इन अवगुणों से बचना चाहिये। अधिक सोना, औंघना, डर, क्रोध आलस्य और टालमटोल।

राज भक्ति का भारी दर्जा धर्म शास्त्र और नीति दोनों में है। राजा या बादशाह के द्रोही का लोक परलोक दोनों बिगड़ता है।

घमण्ड या अहंकार मूर्खता का चिन्ह है।

दूसरे की निन्दा नहीं करना, अपनी प्रशंसा नहीं सुहाती, दूसरे की प्रशंसा से हर्ष होता है, दूसरों को सुख पहुंचाना, छोटों से कोमलता और दया भाव, बड़ों से आदर सत्कार के साथ वर्तना है तथा खेल में भी किसी के साथ जो चालाकी नहीं करता वह महापुरुष है।

यूनान का फीसागोरस पुनर्जन्म में दृढ विश्वास रखता था उसने कहा कि मैं पहले जन्म में फौज का अफसर था और लड़ाई में मारा गया। उसके पता देने से एक कन्दिरा में जहां लड़ाई हुई थी उसके हथियार पड़े हुए मिले। इसी तरह अपने बहुत से चेलों के पिछले जन्मों का हाल बताया और लोगों को प्रत्यक्ष प्रमाण से निश्चय करा दिया।

मौलाना रूम ने फरमाया है कि मैं कितने ही जन्म भोग चुका हूं।

बुद्ध का उपदेशः-नौकरी बुद्धिमान की करो। मूर्ख से बचो। सज्जनों के परोस में रहो। भली कामनाओं को मन में बसाओ और बुरी कामनाओं को निकालो। शान्त स्वभाव रहो। जब कोई दोष लगावें तो अपने मन को न बिगाड़ो सम्पत्ति में फूल न जाओ और विपत्ति में पिचक न जाओ। दूसरे का माल बेईमानी से लेने या दबा बैठने की नियत न करो। जिनसे तुम्हारा जी नहीं मिलता उनसे दूर रहो। किसी को कथनी या करनी से धोखा न दो।

पक्के धर्मी की बोली धीमी होती है क्योंकि जो अच्छे काम की कठिनता को जानता है वह अवश्य सम्भल कर

बोलेगा।

आदमी अपना दर्पण आप है। आपनी आंख आप खोलो नहीं तो कष्ट खोलेगा।

झूठी खबर न उड़ाओ। बुरे से मेल न करो। तुम्हारे शत्रु का बिचरा हुवा बैल तुम्हें मिले तो उस के घर पहुंचादो परदेशी को न सताओ। जब खेत काटो तो थोड़ा सा बटोही के लिये भी छोड़दो। अपने परोसी के साथ अत्याचार न करो। मजूर की मजूरी रात भर रोक न रक्खो। बहरे की ठठोली न उड़ाओ। अन्धे को राह में डोकर खाने को ढेला न रक्खो। मुखबिरी न करो। चुगली न खाओ। अपने परोसी को बुरे काम करने से डाटो। किसी को छोटी निगाह से न देखो लग्न मुहूर्त का विचार मत करो।

बूढ़ों का खड़े होकर सत्कार और सब प्रकार प्रतिष्ठा करो। धरती को बेच न डालो।

प्रेम आकर्षण या खैंच शक्ति का नाम है जिस से यह सब रचना ठहरी हुई है और मालिक आप प्रेम स्वरूप है अपने से बढ कर किसी को चाहना प्रेम है। जो अपने से बढ कर मालिक को चाहता है उस को तन मन धन अपने प्रीतम

पर वार देने में क्या शोच विचार होगा।

प्यारे! अगर तू न बोलेगा तो मैं अपने हृदय को मौन से भर लूगा, मैं चुप चाप पड़ा रहूंगा और तारों से भरी हुई रात्रि की तरह प्रतीक्षा करूंगा, तेरी वाणी की सुनहरी धाराएं आकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी।

लोग अपने विधि विधानों से मुझे जकड़ने के लिये आते हैं किन्तु मैं उन्हें टाल देता हूं क्योंकि मैं तो केवल प्रेम के कर कमलों में आत्म समर्पण करना चाहता हूं। मुझे आज नींद नहीं, रह २ कर मैं द्वार खोलता हूं और अंधेरे में बाहर की ओर देखता हूं मैं विस्मित हूं कि तेरा रास्ता किधर है। दुःख रूपी दूत तेरे द्वार को खटखटा रहा है। उसका संदेश है कि तेरा स्वामी जगता है और रात्रि के अन्धकार में वह तुझे प्रेमाभिसार के लिये बुला रहा है। वह ऐसे समय आया जब रात्रि का सन्नाटा था। वह मेरे इतने नज़दीक आता है कि जिस की श्वास मेरे शरीर में लगती है।

मेरा छोटा हृदय उन के हाथों के अमृतमय स्पर्श से अपने आनन्द की सीमा को खो देता है और उस में ऐसे उद्गार उठते हैं कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता।

संसारी जनों का प्रेम मुझे सब तरह से बान्धने का यत्न करता है और मेरी स्वतन्त्रता को छीन लेता है परन्तु तेरा प्रेम जो उन के प्रेम से बढ़ कर है निराला है वह मुझे दासता की शृंखला में नहीं बांधता किन्तु मुझ स्वतंत्र रखता है।

तीन बात जितनी बढ़ाओगे बढ़ेंगी। भूख नींद और डर।

तीन को महिमा तीन जानते हैं। जवानी की बूढ़े, आरोग्यता का रोगी और धन को निर्धन।

तीन बातों से बचो सब तुम्हें पसन्द करेंगे। किसीसे कुछ न मांगो, किसी को बुरा मत कहो, और किसी के महमान के बिना बुलाए पुच्छलग्गू न हो।

तीन के बिना तीन नहीं रहते। धन बिना वाणिज्य के, विद्या बिना शास्त्रार्थ के और राज्य बिना शासन के।

बूढ़ों का आदर करना, छोटों को सलाह देना, बुद्धिमानों से सलाह लेना, मूर्खों के साथ न उलझना।

चार तरह के आदमी होते हैं मक्खी चूस, कंजूस उदार और दाता। जो न आप खाय न दूसरे को दे वह मक्खी चूस, आप खाय पर दूसरे को न दे वह कंजूस, आप

भी खाय और दूसरों को भी दे वह उदार और जो आप न खाय परन्तु दूसरों को दे वह दाता कहलाता है। यदि दाता नहीं बन सकते तो उदार तो अवश्य ही होना चाहिये।

संकट में मित्र की, रण में शूर की, ऋण में साहू की टोटे में स्त्री की और रोग शोक में नाते दारों की पहचान होती है।

खुशी, रंज, रोजी, मौत यह चार अपने आप आती हैं।

चार जाकर फिर नहीं आती, छूटा हुवा तीर, मुंह से निकली बात. बीती हुई उमर और टूटा हुवा दिल।

जो आके न जाय वह बुढापा देखा।
जो जाके न आय वह जवानी देखी॥

चार चीजें पहले निर्बल दीखती हैं और आगे जोर दिखलाति है। शत्रु, आग, रोग और ऋण।

पांच के संग से बचना चाहिये झूठा, मूर्ख कञ्जूस, डरपोक और दुष्ट।

मैं आकारों से समुद्र में इस आशा से गहरी डुबकी मारता हूं कि निराकार का पूर्ण मोती मेरे हाथ आजाय।

मैं अपने जीवन भर अपने गीतों के द्वारा तुझे ढूंढता रहा हूं। अब मैं उत्सुक हूं कि मर कर अमरत्व में लीन हो जाऊं।

मैं तेरी कथाओं को अमर गीतों में प्रकट करता हूं और तेरा रहस्य मेरे हृदय से निकल पड़ता है।

मैं तुझे तेरी जीत की भेंटों और अपना हार के हारों हारों से अलंकृत करूंगा।

जीवन रूपी नौका की पतवार को जोड़ते समय मैं जानता हूं कि अब तू इसे अपने हाथ में ले लेगा।

नीलाकाश से एक आंख मेरी ओर देखेगी और इशारे से चुपचाप मुझे अपनी ओर बुलाएगा।

जब मैं यहां से विदा हाऊं तब मेरे अन्तिम वचन यह हों, कि मैंने जो कुछ देखा है उस से बढ़ कर और कुछ नहीं हो सकता।

जब मां बच्चे को दाहने स्तन से छुड़ाती है तो वह चीखता है और दूसरे क्षण में ही जब वह उसे बांया स्तन देती है तब उसे आश्वासन होता है।

मुझे उस समय की कोई खबर नहीं जब मैंने पहिले पहल इस जीवन में प्रवेश किया था।

जब प्रातःकाल मैंने आकाश को देखा तो मुझे उसी क्षण मालूम हुआ कि मैं इस जगत् में कोई अपरिचित जन नहीं हूं और उस नाम रूप रहित अज्ञेय शक्ति ने मेरी मां का

रूप धारण कर मुझे अपनी गोद ले लिया है. हे मेरे मित्रो ! अब मेरे जाने की बेला है। तुम सब मेरे लिए शुभ कामना करो। आकाश हवा से रक्त वर्ण हो रहा है और मेरा मार्ग सुहावना है। मैं अपनी यात्रा पर खाली हाथ और आशा पूर्ण हृदय के साथ जाता हूं।

मुझे छुट्टी मिल गई है। ऐ मेरे भाइयो ! मुझे विदा करो मैं तुम सब को प्रणाम करता हूं। मेरा बुलावा आया है और मैं यात्रा के लिए तयार हूं।

मैं जो कुछ हूं, मेरे पास जो कुछ है, मैं जो कुछ आशा करता हूं, और मेरा प्रेम यह सब गम्भीर रीति से सदा तेरी ओर प्रवाहित होते रहे हैं। मेरे ऊपर तेरे नयनों का अन्तिम कटाक्ष पड़ते ही मेरा जीवन सदा के लिए तेरा होजायगा।

पुष्प पिरो लिए गए हैं, वर के लिए माला तयार है मृत्यु पश्चात्, वधु भक्त अपने घरसे विदा होगी और अपने स्वामी से शून्य रात्रि में अकेली मिलेगी।

जब मृत्यु मेरे द्वार को खटखटायेगी तब अपने प्यारे अतिथि के आगे जीवन का भरपूर पात्र रख दूंगा। उसे खाली हाथ न जाने दूंगा।

प्रवीण शिल्पी अनेकों प्रतिमायें बनाते हैं। जब उनका समय आजाता है तब वे विस्मृति की पवित्र धारा में विसर्जन करदी जाती हैं।

वसन्त की मन्द २ वायु रह रह कर तेरे निर्जन भवन

में उन फूलों के समाचार लाती है जो पूजा में तुझे नहीं चढाये जाते।

मैं तेरे सन्ध्यागमन के सुनहरे शामयाने के नीचे खड़ा हूं। और अपने उत्सुक नयनों को तेरे मुखारविन्द की ओर उठाता हूं।

हाथ जोड़ कर अश्रु जल से मैं उस की पूजा करूंगा और अपने हृदय के रत्न को उस के चरणों में अर्पण करूंगा।

हे प्रभु! तेरे हाथ में अनन्त समय है हमारे पास वृथा नाश करने के लिए तनिक भी समय नहीं है इस लिए हमें अपने अवसरों और सफलताओं के लिए छीना झपटी करनी चाहिए।

हम इतने दरिद्री हैं कि विलम्भ नहीं कर सकते। झगड़ा करने वालों के साथ झगड़ा करने में मेरा समय निकल जाता है। तेरी वेदी अन्त तक शून्य पड़ी रह जाती है। दिन समाप्त होने पर डरता हूं कि कहीं तेरा द्वार बन्द न हो जाय। पर ज्ञात होता है कि अभी समय बाकी है।

मेरे जीवन के प्रत्येक क्षण का नियन्ता तू है। सब के भीतर रह कर तू बीजों में अंकुर, कलियों में फूल और फूलों में फल उत्पन्न करता है।

चौपाई ।

छोटा बड़ा कहें जो कुछ हम, फबता है सब तुझे महत्तम।
गुड़ सा मीठा है भगवान । बाहर भीतर एक समान ॥
किस का ध्यान करूं सविवेक । जल तरङ्ग से हैं हम एक ॥

दोहा ।

भवसागर से तरन का, सोधा यही उपाय ।
महादेव के भजन में, चित्त मगन हो जाय ॥ १ ॥
शङ्कर सिन्धु अगाध में, नाना दृश्य तरङ्ग ।
क्षण भर में होवे उदय, क्षण में होवे भङ्ग ॥ २ ॥
दर्पण में भाषै जिमि, नगर बहुत विस्तार ।
शङ्कर में भाषे तिमि, अनहोना संसार ॥ ३ ॥
ओत प्रोत शिव सबन में, ज्यों कपड़े में सूत ।
जो उस को जाने नहीं, सो नर बड़ा कपूत ॥ ४ ॥
जिमि रज्जू अज्ञान से, भाषत काल भुजङ्ग ।
जीव हुआ भाषै तिमि, आतम देव असङ्ग ॥ ५ ॥
अजर अमर निश्चल अकल, सकल कल्पना हीन ।

निराकार निर्विकार है, व्यापक इन्द्रि विहीन ॥ ६ ॥
मैं मेरी जब से मिटी, हटा मोह का फन्द ।
जित देखे उतही दिखे, पूरण परमानन्द ॥ ७ ॥
महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुणधाम ।
जेहि कर्मन रम जाहि सन, नाहिं ताहि सन काम ॥ ८

पद ।

प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म, ऐसो ऋगवेद कहे ।
अहंब्रह्म अस्मि इति, यजुर्वेद यूं कहे ॥
तत्त्वमसि इति सामवेद, यूं बखानत है ।
अयं आत्मा ब्रह्म कहि, अथवण यूं लहे है ॥ १ ॥

सोरठा ।

कुन्द इन्दु सम देह, उमा रमण करुणा अयन ।
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन ॥ १ ॥
मूक होय वाचाल, पङ्गु चढ़े गिरवर गहन ।
आसु कृपा सु दयालु, द्रवौ सकल कलिमल दहन ॥ २ ॥
बदौं पवनकुमार, खल वन पावक ज्ञान घन ।

जासु हृदय आगार, बसहिं राम शर चाप धर ॥ ३ ॥

सवैया ।

परम पवित्र तुम मित्र हो हमारे ऊधो,
अन्तर बिथा की कथा मेरी सुन लीजिये ।
ब्रज की वे बाला जपैं मेरी जयमाला,
बढ़ो बिरह की ज्वाला तामैं तन मन छीजिए ॥
मेरो बिश्वास मेरी आश, रस रास मेरो,
मिलवे की प्यास जान सावधान कीजिए ।
प्रीति सूं प्रतीति सूं लिखी है रस रीति सूं,
सो पत्रिका हमारी प्राण प्यारिन कू दीजिए ॥ १ ॥

कवित्त ।

दास तो तिहारे जो उदास तो तिहारे,
दूर पास ता तिहारे आमखास तो तिहारे हैं ।
दीन तो तिहारे मतिहीन तो तिहारे,
जो नवीन तो तिहारे प्राचीन तो तिहारे हैं ॥
क्रूर तो तिहारे गुण पूर तो तिहारे,

राखे नूर तो तिहारे सांचे शूर तो तिहारे हैं ॥
भायक तिहारे यश गायक तिहारे,
हो सहायक हमारे हम पायक तिहारे हैं ॥ १ ॥

सवैया ।

निशि वासर प्रेम के पन्थ चले ,
हिय ते हरि नाम विसारे नहीं ।
घटि वृद्धिय देखि के एक धरो ,
धरका जिय में कछु धारें नहीं ॥
विधि को विश्वास "ओंकार" कहैं ,
अपनो वल बुधि बिसारे नहीं ।
वही मानस की बड़ी किम्मत है ,
जा समय पर हिम्मत हारे नहीं ॥ १ ॥

कवित्त ।

सामिल है पीर में शरीर में न राखें भेद ,
अन्तर कपट कछु होय तो उघरि जात ।
ऐसो ठाठ ठाने जाते विना जन्त्र मन्त्रन ते ,

सांपहुं को जहर उतारे तो उतर जात ॥
ठाकुर कहत यामें कठिन न मानो कछु ,
हिम्मत किये ते कौन काज न सुधर जात ।
चारि जने चार हीं दिशा ते चारि कौन गही,
मेरु को हिलायं औ उखारे तो उखर जात ॥१॥

सवैया ।

धूमत द्वार मतङ्ग अनेक ,
जंजीर जरे मद अम्बु चुआते ।
तीखे तुरङ्ग मनो गति चञ्चल ,
पौन को गौनहुं को जो लजाते ॥
भीतर चन्द्रमुखी अवलोकत ,
बाहर भूप खरे न समाते ।
ऐसे भये तो कहा "तुलसी" जो ,
पै जानकीनाथ के रङ्ग न राते ॥१॥

छप्पय ।

कबहुंक खग मृग मीन, कबहुं मरकट तनु धरके ।
कबहुंक सुर नर असुर, नागमय आकृति करके ॥
नटवत लख चौरसी, स्वांग धरि २ मैं आयो ;

हे त्रिभुवन के नाथ, रीझ कर कछू न पायो ॥
जो हो प्रसन्न तो देहु अब, मुक्ति दान मांगू विहंस ।
जोपै उदास तो कहहु इम, मत धररे नर स्वांगअस

कवित्त ।

एक स्वांस खाली मत खोय लो खलक बीच,
कीचरु कलङ्क अङ्क धोयले तो धोयले ।
उर अन्धियार पाप पुर सों भरयो है तामें,
ज्ञान की चिरागें चित्त जोयले तो जोयले ॥
मिनया अन्म वार २ न मिलेगो मूढ़,
पूर्ण प्रभु से प्यारो होयले तो होयले ।
देह क्षणभंगुर यामे जन्म सुधारबो सो,
बीज के झमके मोती पोयले तो पोयले ॥ १ ॥

कवित्त ।

दाता हु महीप मानधाता हु दिलीप जैसे,
जाके यश अजहूं लों द्वीप २ छाये हैं ।
बली ऐसो बलवान को भयो जहान बिच,

रावण समान को प्रतापी जग जाये हैं ॥
की कलान में सुजान द्रोण पारथ से,
जाके गुण दीनदयाल भारत में गाये हैं।
कैसे २ शूर रचे चातुर विरञ्च जू ने,
फेर चकचूर कर धूर में मिलाये हैं ॥ २ ॥

पद ।

जिसका कोई न होय हृदय से उसे लगावे,
प्राणीमात्र के लिये प्रेम की ज्योति जगावे।
सब में विभु को व्याप्त जान सबको अपनावे,
है बस ऐसा वही भक्त की पदवी पावे ॥ १ ॥

पद ।

चोरी हिंसा और व्यभिचार, काया के त्रिय दोष विचार,
निन्दा अरु कटुवाद असत्य, वाणी के यह दूषण सत्य।
तृष्णा द्वेष बुद्धि अरु क्रोध, त्रिविधि प्रकार तू मनको शोध,
इहि प्रकार नव दूषण त्याग, कर सत्सङ्ग खुलेंगे भाग ॥

पद ।

टेक–को याचिये शम्भू तज आन ।

दीनदयाल भक्त आरत हर, सब प्रकार समरथ भगवान ।
दारुण दनुज जगत दुःखदायक, जारियो त्रिपुर एक ही बान
काल कूट ज्वर जरत सुरासर, निजपन लाग कियो विषपान
संवत सुलभ उदार कल्पतरु, पारवती पति परम सुजान ।
देहु काम रिपु रामचरण रति, तुलसीदास कहे कृपा निधान ॥

सोरठा ।

टेक–शिव शिव रटत मन आनन्द ।

जाके सुमिरत विघ्न विनशत, कटत यम को फन्द ।
तीन नेत्र विशाल झलकत, तिलक माथे चन्द १
ओढ़ना बाघम्बरा शिव, भणत छवि मकरन्द ।
भूत प्रेत बिताल जङ्गम, लिये फिरे शिव सङ्ग २
वृषभ वाहन रुचि धतूरा, भोगता विष भङ्ग ।
पारवति पति शरण की गति सूर मन आनन्द ३॥

कवित्त ।

कोऊ तो कहत ब्रह्म नाभि के कमल मध्य,
कोऊ तो कहत ब्रह्म हृदय में प्रकाश है ।
कोऊ तो कहत कण्ठ नासिका के अग्र भाग,
कोऊ तो कहत ब्रह्म भृकुटी में बास है ।
कोऊ तो कहत ब्रह्म दशवें द्वार बिच,
कोऊ तो कहत भंवर गुफा में निवास है ।
पिण्ड में ब्रह्माण्ड में निरन्तर बिराजे ब्रह्म,
सुन्दर अखण्ड जैसे व्यापक आकाश है ॥ १ ॥

सवैया ।

काम ही न क्रोध जाके लोभ ही न मोह जाके,
मद ही न मत्सर न कोऊ न विकारी है ।
दुःख ही न सुख माने पाप ही न पुण्य जाने,
हर्ष न शोक आने देह ही तें न्यारो है ॥
निन्दा न प्रशंसा करे राग ही न द्वेष धरै,
लेन ही न देन जाके, कछु न पसारो है ।

सुन्दर कहत ताकी अगम अगाध ताकी,
ऐसा कोऊ साधु सो तो रामजी कूं प्यारो है ॥
प्रथम सुयश लेत शील हू सन्तोष लेत ।
क्षमा दया धर्म लेत पाप से डरतु है,
इन्द्रिय कूं घेरी लेत मन ही कूं फेरी लेत,
योगकि युगति लेत ध्यान ही धरतु है ॥
गुरु को बचन लेत हरि जी को नाम लेत,
आत्मा को शोधि लेत भवजल तरतु है ।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु देत नाहिं,
सन्त जन निशि दिन लेबो ही करतु है ॥ २ ॥
सांचो उपदेश देत भलि २ सीख देत,
समता सुबुद्धि देत कुमति हरतु है ।
मारग दिखात देत भावहुं भगति देत,
प्रेम की प्रतीत देत अमरा भरतु है ॥
ज्ञान देत ध्यान देत आतम विचार देत,
ब्रह्म कूं बताय देत ब्रह्म में चरतु है ।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु लेत नाहि,
सन्त जन निशि दिन देवो ही करतु है ॥ ३ ॥

मेरो देह मेरी गेह मेरो परिवार सब,
मेरो धन माल मैं तो बहुविधि भारो हूं।
मेरे सब सेवक हुक्म कोऊ मेटे नाहीं,
मेरी युवति को मैं तो अधिक प्यारो हूं॥
मेरो बन्श ऊंचो मेरे बाप दादा ऐसे भए,
करत बड़ाई मैं तो जगत उजारो हूं।
सुन्दर कहत मेरो मेरो ही जाने शठ,
ऐसे नहिं जाने मैं तो काल ही को चारो हूं॥४॥

कवित्त।

ब्रह्म तो वही है जौन सच्चिदानन्द घन,
निर्विकार निर्विकल्प नित्य ही प्रकाशै है।
माया तो वही है जौन रज तम सत,
गुण धार नाना नाम रूप जिनकै बिनाशै है॥
ईश्वर तो वही है निज रूप को न भूले कभी,
माया गहे माया सों पृथक उजासै है।
जीव तो वही है जो अविद्या को संयोग पाय,
भूले निज रूप भ्रम फांस ना निकासै है॥ १॥

जाको शुद्ध हियो ताको अनुभव तुम्हारो होत,
नाथ निज तेज ही से मायागुण नासी है।
जगत के व्यापी निज जापी को प्रतापी करो,
नाम रूप आप के अनन्त दिव्य भासी है॥
आप के समान नहीं अधिक कहां ते होय,
अहङ्कार क्षार होत ध्याये मुदराशी है।
काल त्रास नासी तत्काल कर निहाल देत,
राजे रघुराज जैसे अवध विलासी है॥ २॥
आदि है न अन्त है अगम रूप अज महापावन,
प्रसङ्ग औ अलख प्रमाण अप्रमाण है।
एक है प्रकाश है पूरण महाकाश,
विभु निर्गुण निरञ्जन है चिदानन्द ज्ञान है॥
नित्य है अमर अविनाशी औ अजर सदा,
अव्यक्त निर्विकल्प अवाच्य निर्वान है।
विश्व को कर्तार शब्द ओंकार है वेदरूप,
पुराण पुरुष विभु एक भगवान है॥ ३॥
मोर मुकट वारो धर भेष नट वारो,
छोटी लोल लट वारो जगत उजारो है।

सांवरे वर्ण वारो मुरली धरन वारो,
सङ्कट हरन वारो नन्दजू को प्यारो है ॥
दानव दलन वारो छबि को छलन वारो,
मटक चलन वारो पीप उर धारो है ।
कंस को दलन वारो भृगुलता लक्ष वारो,
मोरपङ्ख वारो रखवारो सो हमारो है ॥ ४ ॥

चेतावनी ।

जो यह निर्गुण ध्यान नहीं ह्वै, तो सगुण ईश कर मनका थाम ।
सगुण उपासना हूं नहिं ह्वै तो करि निष्काम करम भज राम ॥
जो निष्काम कर्म नहिं ह्वै, तो करिये शुभ कर्म सकाम ॥
जो सकाम कर्म हू नहीं होवे, तो शठ बार बार मर जांव ॥

दोहे ।

होतो तो रहतो नहीं, जरतो ताके सङ्ग ।
प्रीति पुरानी कारने, भस्म मुवावत अङ्ग ॥ १ ॥
होतो तो रहतो नहीं, जलतो वाके सङ्ग ।
कपट प्रीति के कारणे, भस्म रमावत अङ्ग ॥ २ ॥

छप्पय ।

तृण जो दन्त पर धरहिं, तिनहि मारत न सबल कोई ।
हम नितप्रति तृण चरहिं, बैन उच्चरहिं दीन होई ॥
हिन्दूहि मधुर न देहिं, कटुक तुरकन न पिलावहिं ।
पय विशुद्ध अति स्रवहिं, बच्छ महिथम्बन जावहिं ॥
सुन शाह अकबर, अरज यह, करत गौ जोरे करन ।
सो कौन चूक मोहि मारियत, मुये चाम सेवहुं चरन ॥

कवित्त ।

गोविन्द के कीये जीव जात हैं रसातल को,
गुरु उपदेश सो तो छूटे जम फन्द ते ।
गोविन्द के कीये जीव वश परे कर्मन के,
गुरु के निवाज सूं ते फिरत स्वच्छन्द ते ॥
गोविन्द के कीये जीव डूबत भवसागर में,
सुन्दर कहत गुरु काढ़े दुःख द्वन्द ते ।
और हूं कहां लोक जू मुख से बनाय कहूं,
गुरु को तो महिमा अधिक महिमा गोविन्द ते ॥ १ ॥

छन्द ।

राम है मातु पितु सुत बन्धु, वही सङ्गी सखा गुरु राम सनेही ।
राम को मोय भरोसो है राम को, रङ्गी रुच राखो न केही ॥
जीवत राम है मुये पुन राम, राम सदा रघुनाथ की गति जेही ।
सोई जिये जग में तुलसी, न तो डोलत और मुये धर देही ॥

कुण्डलिया ।

पृथ्वी पवन आकाश है, नीर अग्नि शशि भान ।
कपोत गुरु अजगर लख्यो, और सिन्धु को जान ॥
और सिन्धु को जान, पतङ्गी भंवरा कहिये ।
माखी हाथी मृग मीन, अरु पिङ्गला लहिये ॥
चिन्ह बाल कन्या कहूं, तीर बनावनहार ।
सांप माकरी भृङ्ग ज्यों, चौबीसों उरधार ॥ १ ॥

कवित्त ।

मैं तो हूं पतित आप पावन पतित नाथ,
पावन पतित हो तो पातक हरोहिगे ॥

मैं तो महादीन आप दीनबन्धु दीनानाथ,
दीन बन्धु हो तो दया जिय में धरोहिगे ॥
मैं तो हूं गरीब आप तारक गरीबन के,
तारक गरीब हो तो विरद धरोहिगे ।
मेरी करणी पै कछु मुकुर न कीजे कान्ह,
करुणानिधान हो तो करुणा करोहिगे ॥ १ ॥
कैसे तुम गणिका के अवगुण ना गिने नाथ,
कैसे तुम भीलनो के झूठे बेर खाये हो ।
कैसे तुम द्वारिका में द्रोपदी को टेर सुनी,
कैसे तुम गज के काज नंगे पग धाये हो ॥
कैसे तुम सुदामा के छिन में दरिद्र हरे,
कैसे तुम उग्रसैन बन्दी ते छुड़ाये हो ।
मेरी बेर एती देर कान मूंद रहे नाथ,
दीनबन्धु दीनानाथ काहे को कहाये हो ॥ २ ॥
गिरि को उठाय ब्रज गोप को बचाय लियो,
अनल ते उबारो पुन बालक मंझारी को ।
गज की अरज सुन ग्राह ते छुड़ाय लीनो,
राख्यो व्रत नेम धर्म पाण्डवा की नारी को ॥

राख्यो गज घन्ट तले बालक विहंगम को,
राख्यो प्रण भारत में भीष्म ब्रह्मचारी को।
त्रिविधा दुःखहारी निज सन्तन सुखकारी,
एक मोह तो भरोसा भारी ऐसे गिरधारी को॥
स्वांस के भरोसे गठ मांस में निवास कियो,
आशा मन माहीं राखी मानन शरीरां की।
बड़े २ शूरवीर देख छोड़ गये मूरख,
रही ना निशानी जग शाहां ओ वजीरां की॥
भज दुःखभञ्जन निरञ्जन का रेरे मूढ़,
नित्य रोज सुथले जो पाहरन में कीरां की।
कहे कवि धारामल सुमिरन की यही पल,
एक २ घड़ी जात लाख २ हीरां की॥ ४॥
दीनता को त्याग नर अपना स्वरूप देख,
तू तो शुद्ध ब्रह्म अज हृदय को प्रकाशी है।
अपने अज्ञान तैं जगत सब तू ही रचे,
सर्ब को संहार करे आप अविनाशी है॥
मिथ्या प्रपञ्च देख दुःख निज आन जीये,
देवन को देव तू तो सब सुख राशी है॥

जीव जग ईश होय माया से प्रभावे तू ही,
जैसे रज्जू सांप सीप रूप ह्वै प्रभासी है ॥ ५ ॥
श्याम तन श्याम मन श्याम ही हमारो धन,
आठों याम ऊधो यहां श्याम ही सों काम है।
श्याम हीये श्याम जीये श्याम बिन नाहिं तीये,
आंधरे की लकड़ी अधार नाम श्याम है॥
श्याम गति श्याम रति श्याम ही प्रताप पति,
श्याम सुखदाई से भुलाए घर धाम है।
तुम भये बौरे यहां पाती लाये दौरे दौरे,
योग कहां राखें हम रोम रोम श्याम॥ ६॥
पुरुष रतन गुण गण को सदन पुन,
पौरुष को आय तन परम प्रवीणा है।
सारी धरा को शृङ्गार जड़ाजड़ को सरदार,
भोग मोक्षको भण्डार अरु चारू लखि लीना है॥
चतुर वदन को चतुर हम चीनो तब प्रथम,
जो ऐसे नर को उतपत कीना है।
ताके पाछे तत्क्षण नष्ट करे हा हा कष्ट,
इति विधि विधिनाको पण्डित न चीना है॥

दीप में पतंग परे जरे न प्रताप जाने,
मीन से अज्ञान भये कुण्डो मिले मांस कों।
गज गजी हेत परयो खात खात अंकुश को,
राग में कुरङ्ग राग करे निज नाश को॥
पङ्कज की गन्ध बीच नीच भृङ्ग मीच गहे,
इतिआदि अज्ञ नाश करें निज स्वांस को।
अहो हा सघन महा मोह को प्रताप लहा,
शुभाशुभ जानो पै न हनो भोग आशा को॥८॥
सोम नाम विप्रवर गिरिजा के वर कर,
लीनो सुधा फल कर दीनो नरनाह के।
भूपति सुपतनी को रानी निज मीत की को,
ताने दोनों मीतकी को नीको फल चाह के॥
आगे गणिका सराने धरापति आगे धरा,
नरनाथ मांथ धुना सुन धुना ताहि के।
हाहा कामिनी के हित हते कामिनी के अब,
ताह तजो ताहे भजो शीश शशी जायके॥६
ग्रन्थन के ज्ञाते माते मत्सर कीच बीच,
धरा नाथ मद साथ भरे दुःशात हैं।

दूषण चमीरे मोरे भूषण सुभाषण की,
पण्डित भूपाल तो न सुने मेरी बात हैं ॥
पुना आन जन्तु जेते दुखी मूढ़ दीन तेते,
मोते सकुचात हम ओते सकुचात हैं ।
पात्र बिना भाषे राखे हवन को राखे तैसे,
जीरणमो गांन सो तो वास होत जात हैं ॥१०॥

सवैया ।

तातको शोच न मातको शोच न शोच नहीं मोय अवध तजेको ।
बनवास लिएको शोच नहीं और शोच नहीं मोहि पिता मरेको ॥
सिया हरेको शोच नहीं और शोचनहीं मोय गृद्ध मरेको ।
बालि हतेको शोच नहीं और शोच नहीं माय लङ्का जरे को ॥
लक्ष्मण मूर्छित शोच नहीं और शोच नहीं मोय विपत्ति परेको ।
शोच तो है इक है तुलसी मोहे भागे विभीषण पैज दियेको ॥१
बातहिं से दशरथ मरे अरु बातहिं राम फिरे बन जाई ।
बातहिं से हरिश्चन्द्र सहे दुख बातहिं राज्य दियो मुनिराई ॥
रे मन बात विचार सदा कहुं बात की गात में राख सचाई ।
बात ठिकाने नहीं जिनकी तिन बाप ठिकाने न जानहुं भाई ॥२

पूरण ब्रह्म लखा जिन केवल एक अखण्ड रमा भवसारे।
रूप न रेख अलेख सदा यम भाषत हैं जिनको श्रुति चारे॥
ज्ञान दिनेश चढ़ा जिनके मत मोह निशा के मिटे सब तारे।
सो गुरु हैं हमरे उरमें जिन पाप महानिधि पार उतारे॥ ३॥
एक अखण्डित ब्रह्म असङ्ग अजन्म अदृश्य अरूप अनामें।
मूल अज्ञान न सूक्ष्म स्थूल समष्टि न व्यष्टि पन्थो नहीं तामें॥
ईश न सूत्र विराट न प्राज्ञ तैजस विश्व स्वरूप न जामें।
बन्ध न मोक्ष न भोग न योग नहीं कुछ वामेरु है सब वामें॥४
जाग्रत में जो प्रपञ्च प्रभाषत सो सब बुद्धि विलास बन्यो है।
ज्यों सुपने मेंही भोग्य न भोग तऊ एक चित्र विचित्र जन्यो है॥
लीन सुषुप्ति में मति होतई भेद भगे एक रूप सुन्यो है।
बुद्धि रच्यो जो मनोरथमात्र सुनिश्चत बुद्धि प्रकाश बन्यो है॥५
ब्रह्म निरीह निरामय निर्गुण एक निरञ्जन और न भाषे।
ब्रह्म अखण्डित है अध ऊपर बाहर भीतर ब्रह्म प्रकाशे॥
ब्रह्म ही सूक्ष्म स्थूल जहां लग ब्रह्म ही साहिब ब्रह्म ही दासे।
सुन्दर और कछू मत जानहुं ब्रह्म हो देखत ब्रह्म तमासे॥ ६॥
ये सब भाव मिटे तबहीं जब कोविद की नर संगति पावे।
भाष्य शारीरक आदि प्रढ़े कठ केन कथा मति संग मिलावे॥

संयम योग समाधि करे यम नेम निरन्तर लक्ष्य बनावे।
ब्रह्म ही ब्रह्म चहूं दिश देखत या विधिते पद निर्भय पावे॥ ७॥
जो फल थे तन मानव के वह लाभ किये हम ने अब सारे।
आनन्द ब्रह्म सुधानिधि को लख दूर भये भव के भय भारे॥
क्षुद्र नदी सम मेट दियो वपु ब्रह्म पयोनिधि माहिं पधारे।
प्रत्यक रूप भई ममता यह पुत्र बधू अब नाहिं हमारे॥ ८॥
सुतके हित प्यार करे जगमें कहो कौन करे धनके हित प्यारा।
हित नार न प्यार करे जगमें इमि ढूढ लिया हमने भवसारा॥
हित आतम प्यार करें सबही यह आतम है सबसे अति प्यारा।
वह आनन्दरूप पयोनिधि है उसके बिन और नहींको उ प्यारा॥
वसु पूरणहो वसुधा सगरी पुन और पदारथ हों सुखकारी।
गज गामिनी भामिनीहो मधुरा मुखकी छवि चन्द्रकला जिन टारी॥ शुभ व्यञ्जन होहिं अहार घने जिनके रसते तनु पुष्टि अपारी। सुख आतम नाहिं लहें जबहीं तब होहिं हलाहल के सम चारी॥ १०॥

वह आनन्द नाह मिले धन से और नाह मिले वह त्याग कमाये। तन तीरथ त्याग करे न मिले न मिले हरिके पुर देह तपाये॥ घन कानन घोर निवास करे अथवा गिरिकन्दर

माहिं बसाये । रति आतम एक सुधा धन है पर जो रति नाह सुनाह सताये ॥ ११ ॥

जिनको नित मैं चितमो चितमो तिनकी रति न तोर माहिं रतीना । वह आन पुमान की सङ्ग रती पुनि ता मन में गणिका गृह कीना ॥ धिक है अबला भूत् कन्दर्पै अरु मोहि धिकार जो मार अधीना । इति रति समूह की प्रीति तजी नृप हाय योगीश्वर ईश्वर चीना ॥ १२ ॥

वे श्रुति ज्ञान सुजानन के अभिमान मदादि विकार निवारे । के चित् मो सम नीचन के चित में बहुमान मदादिक धारे ॥ शून्य यथा मठ साधुन को अति मोक्ष को साधन दोष महारे । सो हम से मदनातुर ओ अति काम को कारण वाम समारे ॥ १३ ॥

कवित्त ।

बन में रहत नित शिवरी कहत,
सब चहत टहल साधु तन न्यूनताई है ।
रजनी के शेष ऋषि आश्रम प्रवेश करी,
लकरीन बोझ धरी आवे मनभाई है ॥

न्हाइवे को मग झारी काँकरिन बीनडारि,
बेगि उठ जाय नेकु जाति न लखाई है।
उठत सवार कहें कोन धौं बुहारि गयो,
भयो हिये सोच कोऊ बड़ो सुखदाई है॥ १॥
बड़े ही असङ्ग बे मतङ्ग रसरङ्ग भरे,
धरे देखि बोझ कह्यो कौन खोर आयो है।
करे नित चोरी अहो गहो बाहि एक दिन,
बिना पाये प्रीति बाको मन भरमायो है॥
बैठे निशि चौकी देत शिष्य सब सावधान,
आय गई गहि लई कांपै तन नायो है।
देखतहि ऋषि जल धारा चली नैनन ते,
बैनन सों कह्यो जात कहा कछु पायो है॥ २॥
दीठिहूं न सोंही होत मानि तन गोत छोत,
परी जाय सोच सोत कैसे कै निकारिये।
भक्ति को प्रताप ऋषि जानत निपट नीके,
केऊ कोटि विघ्नाई यापै वारि डारिये॥
दियो वास आश्रम में श्रवण में नाम दियो,
कियो मुनि रोष सेवा कीनी पाति न्यारिये।

शिवरी सों कह्यो तुम राम दरशन करो,
मैं तो परलोक जात आज्ञा प्रभु पारिये ॥ ३ ॥
गुरु के वियोग हिये दारुण ले शोग दिये,
जियो नाहिं जात तोपै राम आस लागी है।
न्हायवे के घाट निशि जात ही बुहार सब,
भई यों अबार ऋषि देखि व्यथा पागी है ॥
छयो गयो नेकु बहु खांफत अनेक भांति,
करिकै विवेक गयो न्हान यह भागी है।
जलसों रुधिर भयो नाना कृमि भरि गयो,
नयो पायो शोच तऊ जाने न अभागी है ॥४॥
ल्यावे वन बेर लागी राम की औ सेर फल,
चाखे धरि राखे फेरि मीठे उन्हीं योग हैं।
मारग में रहे जाइ लोचन बिछाय क्रभू,
आवें रघुराई दृग पावें निज भोग हैं ॥
ऐसे ही बहुत दिन बीते मग जोवतहिं,
आय गये औचकहि मिटे सब शोग हैं।
जोपै तन न्यूनताई आई सुधि छीपि जाई,
पूछे आप कुयोरि कहां ठाढ़े और लोग हैं ॥ ५ ॥

पूंछि २ आये तहां शिवरी स्थान जहां,
कहां वह भागवती देखों दृग प्यासे हैं।
आय गई आश्रम में जानि कै पधारे आप,
दूरिहि ते साष्टांग करी चक्षु भासे हैं॥
हबकि उठाय लई व्यथा तन दूरि गई,
नई नीर भरी नयन परे प्रेम प्यासे हैं।
बैठे सुख पाय फल खाय के सराय बेई,
कहां कहा कहौं मेरे मग दुःख नासे हैं॥ ६॥
करत हैं शोच सब बैठे ऋषि आश्रम में,
जलको बिगर सो सुधार कैसे कीजिये।
आवत सुने हैं बन पथ रघुनाथ कहूं,
आवें जब याको भेद भले कह दीजिए॥
इतने ही मांझ सुनि स्यौरी के विराज आगि,
गयो अभिमान चलो पग गहि लीजिये।
आय खुनसाय कहि नीर को उपाय कहो,
गहो पग भीलनि के स्वच्छ तन भीजिए॥७॥
रतन अपार सार सागर उधार किये,
लिए हित चाय के बनाय माला करी है।

सब सुख साज रघुनाथ महाराज जू को,
भक्त सों बिभीषण जू आनि भेंट धरी है ॥
सभा ही की चाह अवगाह हनुमान गरे,
डारि दई सुधि भई मति अरबरी है।
राम बिन काम कौन फेरि मनी दीने डारि,
खोलि त्वचा नामहिं दिखायो बुद्धि हरी है ॥८॥

छप्पय ।

जय जय मीन बराह कमठ नर हरि बलि वामन ।
परशुराम रघुबीर कृष्ण कीरति जग पावन ॥
बुद्ध कलङ्की व्यास पृथू हरि हंस मन्वंतर ।
यज्ञ ऋषभ हयग्रीव ध्रुव वरदेन धन्वंतर ॥
बदरोपति दत्त कपिलदेव, सनकादिक करुणा करो ।
चौबीस रूप लीला रुचिर, अग्रदास उर पद धरो ॥१॥
विधि नारद शंकर सनकादिक कपिल देव मनु भूप ।
नर हरिदास जनक भीष्मबलि शुक मुनि धर्म स्वरूप ॥
अन्तरङ्ग अनुचर हरजू के जो इनको यश गावे ।
आदि अन्तलों मङ्गल तिनके श्रोता वक्ता पावे ॥

अजामील प्रसंग यह निर्णय परमधर्म को जान।
इनकी कृपा और पुनि समझे द्वादश भक्त प्रधान ॥२॥

कवित्त ।

न्हाता ही बिदुर नारि अङ्गनि प्रक्षाल करि,
आये गण द्वार कृष्ण बोलिकै सुनायो है।
सुनत हि सुर सुधि डारलै निडर मानो,
राख्यो मद भरि दौरि आनिकै चितायो है॥
डारि दियो पीतपट कटि लपटाय लियो,
हियो सकुचायो वेष बेग ही बनायो है।
बैठो ढिङ्ग आय केरा छोलि छिलका खवाइ,
आयो पति खीज्यो दुःख कोटि गुनो पायो है॥१
प्रेम को विचारि आप लागे फलसार देन,
चैन पायो हिये नारी बड़ी दुःखदाई है।
बोले रीझि श्याम तुम कीन बड़ो काम,
तो पै स्वाद अभिराम कैसी बक्स में न पाई है॥
तिया सकुचाई कर काटि डारों हाय,
प्राणप्यारे को खवाय छीलि छिलका निभाई है।

हित ही की बात दोऊ कोऊ पार पावै नाहिं,
नाके ले लडावै सोई जाने यह गाई है ॥ २ ॥
कुंती करतूति कैसे करे कौन भूत प्राणी,
मांगत विपत्ति जासों भाजें सब जन हैं।
देख्यो मुख चाहौं लाल देखे बिन हिये साल,
हूजिये कृपालु नहिं दीजै बास वन है ॥
देख बिकलाई प्रभु आंखि भरि आई फिरि,
घरहि को ल्याई कृष्ण प्राण तन धन है।
श्रवण वियोग सुनि तनक न गयो,
भयो वपु न्यारो अहो एही सांचोपन है ॥३॥

भजन १

टेक—मन परदेशी हो ये नहीं अपना देश।
सत् का कहना सत् में रहना, आनन्दरूप किसी का भय ना।
जो कोई कहै सभी की सहेना, ये ही रटन हमेश ॥ १ ॥
गुरु का वचन सत्य कर मानो, जगत् जाल झूठा कर जानो।
तत्त्वमसि का रूप पिछानो, कट जांय करम कलेश ॥ २ ॥
जो दीखे सो रूप हमारा, कोई नहीं है हम से न्यारा।

ॐ

भगवद्भक्तिः कर्तव्या जन्मतो मरणावधि ।
भक्त्या ज्ञानं स्वयं लब्धमितिवेदानुशासनम् ॥

❋ शब्द सदाचार संग्रह ❋

प्रकाशक

भगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी) प्रांत पंजाब

प्रथमावृत्ति २००० | सन् १९२६ | मूल्य =)।

ओ३म्

* विज्ञान का चर्खा *

मंगलाचरण ।

श्री गुरु परमानन्दं वन्दे स्वानन्द विग्रहम् ।
यस्य सानिध्य-मात्रेण चिदानन्दायते तनुः ॥
ओंकार मंगल सदा विनवौं बारम्बार ।
परमानन्द सरूपं निज ज्ञानं दातार ॥
मो नमो गोविन्द गुरु विनवो अभिजन सोय ।
प्रहले भये प्रणाम तिन नमो जो आगे होय ॥
ो नमो श्री राम जू सत् चित् आनन्द रूप ।
जेहि जानै जग स्वप्नवत् नाशत भ्रम तम कूप ॥
सी देहु उदारता करि करुणा प्रभु मोहि ।
सनकूं देखूं एक सम कभी न भूलूं तोहि ॥
ारायण दो बात को दीजै सदा विसार ।
करो बुराई और ने आप कियो उपकार ॥